इकाई 12 उपनिवेशवाद

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उपनिवेशवाद : विभिन्न दृष्टिकोण

12.2.1 उपनिवेशवाद क्या है?

12.2.2 परिभाषा

12.2.3 उपनिवेशवाद की मुख्य विशेषताएं

12.3 औपनिवेशिक राज्य

12.4 उपनिवेशवाद की अवस्थाएं

12.4.1 पहली अवस्था : एकाधिकार व्यापार तथा लूटपाट

12.4.2 दूसरी अवस्था : मुक्त व्यापार का युग

12.4.3 तीसरी अवस्था : वित्तीय पूंजी का युग

12.5 विभिन्न क्षेत्रों में उपनिवेशवाद

12.5.1 अफ्रीका

12.5.2 मिस्र

12.5.3 दक्षिण-पूर्व एशिया

12.6 भारत

12.6.1 पहली अवस्था

12.6.2 दूसरी अवस्था

12.6.3 तीसरी अवस्था

12.7 ब्रिटिश औपनिवेशिक राज्य

12.8 उपनिवेशवाद : एक या अनेक?

12.9 सारांश

12.10 बोध प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

यदि साम्राज्यवाद वह है, जो महानगरों में होता है तो उपनिवेशवाद वह है जो उपनिवेशों में होता है। वही पूंजीवादी व्यवस्था जो पश्चिमी विश्व में विकास करवाती है, उपनिवेशों में अल्प-विकास पैदा करती है। इस अर्थ में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

पिछली इकाई में आपने साम्राज्यवाद को पूंजीवाद से सीधे तौर पर संबद्ध एक आधुनिक प्रक्रिया के रूप में जाना। आपने यह भी जाना कि विजय, विस्तार और आधिपत्य की प्रक्रियाएं किस तरह यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्थाओं के लिए सम्पदा और समृद्धि जुटा सकीं। यह इकाई इस बात पर चर्चा कर रही है कि यह प्रक्रिया

उपनिवेशों में समाज और अर्थव्यवस्था के लिए क्या अर्थ रखती थी। इस इकाई में उपनिवेशवाद की परिभाषा दी गई है और उपनिवेशों का एक प्ररूप-वर्गीकरण किया गया है (शोषण या फिर आवास (बस्ती) पर आधारित उपनिवेश, देशीय और समुद्र-पार के उपनिवेश, परोक्ष रूप से तथा अपरोक्ष रूप से शासित उपनिवेश)। इसके बाद इस इकाई में उपनिवेशवाद की अवस्थाओं या चरणों पर चर्चा की गई है तथा यह देखा गया है कि विभिन्न उपनिवेशों में इन चरणों में कामकाज कैसे किया गया।

दक्षिण अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा श्वेत उपनिवेशियों के उपनिवेश थे, जबकि भारत और इंडोनेशिया जैसे उपनिवेशों का आर्थिक तथा राजनीतिक तौर पर शोषण होता रहा। उपनिवेशवाद की एक प्रक्रिया वह भी थी जिसमें देशीय विस्तार किए गए (जैसे रूस में) और समुद्र-पार औपनिवेशिकरण के तो कई उदाहरण थे, जैसे चीन। इस इकाई में हम उन उपनिवेशों का अध्ययन करेंगे जिनका शोषण किया गया।

इसी तरह औपनिवेशिक स्थिति सीधे और अप्रत्यक्ष रूप से शासन करके स्थापित की जा सकती थी। सीधे या परोक्ष शासन का अर्थ उस औपनिवेशिक स्थिति से था जो भारत में थी और अप्रत्यक्ष रूप से शासन करने का अर्थ देश पर शासन करने का दायित्व लिए बगैर राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज पर नियंत्रण कसे रखना था जैसा कि चीन में किया गया था। इस दृष्टि से राजनीतिक नियंत्रण रखने के संदर्भ में औपनिवेशिक स्थिति पूर्ण और आंशिक दोनों ही हो सकती थीं। इस तरह उपनिवेशवाद और अर्ध-उपनिवेशवाद बुनियादी तौर पर अलग-अलग स्थितियां हैं। चीन जैसे अर्ध-उपनिवेश के उदाहरण में नियंत्रण राजनीति के बजाय अर्थव्यवस्था पर था। इसी तरह किसी भी साम्राज्यवादी शक्ति का नियंत्रण पर एकाधिकार नहीं होता था क्योंकि कई अन्य शक्तियां भी उपनिवेश का शोषण किया करती थीं। इस संदर्भ में भारत एक अपवाद रहा क्योंकि यहां मुख्यतः ब्रिटेन ने अपना पूर्ण राजनीतिक नियंत्रण बनाए रखा।

नव-उपनिवेशवाद अनौपचारिक साधनों से बनाए गए उपनिवेशवाद की एक कड़ी है। इसमें आर्थिक नीतियां आदेशित होती थीं और सैन्य शक्ति साम्राज्यवादी ताकत के काम आती थी। बाद के अगले चरण में अमेरिका प्रमुख नव-औपनिवेशिक शक्ति बना।

12.2 उपनिवेशवाद : विभिन्न दृष्टिकोण

उपनिवेशवाद को समझने के लिए मुख्य रूप से दो दृष्टिकोण हैं। 1960 के दशक के सफल मुक्ति आंदोलन और क्यूबाई तथा अल्जीरियाई आंदोलनों ने उपनिवेशवाद पर ढेर सारी रचनाएं तथा लेख लिखने की प्रेरणा दी। आंद्रे गुंडर फ्रैंक के प्रमुख लेख के बाद सी. फुरटाडो, थियोडोर डोस सांटोसा, पॉल प्रिबिश, पॉल बारान, समीर अमीन, इम्मानुएल वालरस्टाइन, आरघिरी एमानुएल तथा एफ. कारडोसा की रचनाएं सामने आईं। निर्भरता विचारधारा के अनुसार (आंद्रे गुंडर फ्रैंक, समीर अमीन आदि) कोई भी उपनिवेश जब तक पूंजीवाद का अंग है तब तक वह राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करने के बादं भी आर्थिक तौर पर निर्भर बना रहेगा क्योंकि पूंजीवादी वर्ग विकास के कार्यों का बीड़ा उठाने में असक्षम थे। वॉलरस्टाइन के

'विश्व व्यवस्था' के दृष्टिकोण ने पूंजीवादी विश्व को केंद्र, परिधि तथा अर्ध-परिधि में बांटा जिनके मध्य असमान विनिमय का संबंध बना रहा। केंद्र की मुख्य अर्थव्यवस्थाएं उच्च मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन कर रहीं थीं और उनके राज्य शक्तिशाली थे। परिधि के देशों में निम्न स्तर की प्रौद्योगिकी और कम वेतन का दबाव था और वहां के राज्य तथा पूंजीवादी वर्ग दोनों ही कमजोर थे तथा अर्थव्यवस्था पर विदेशी पूंजी का प्रभुत्व था। अर्ध-परिधि के दायरे में आने वाले देशों जैसे भारत में राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार पर शासन का अधिकतम नियंत्रण था। आर्थिक राष्ट्रवाद ऐसे देशों का नमूना था, जो विश्व व्यवस्था में अपने लिए एक सशक्त स्थान बनाने के लिए मोल-तोल कर पाए थे। उपनिवेशवाद के सांस्कृतिक पक्षों को अमिलकार काब्राल, फ्रैंज़ फ़ैनों तथा एडवर्ड सईद ने उजागर किया। बिपन चंद्र ने औपनिवेशिक संरचना, औपनिवेशिक आधुनिकीकरण, उपनिवेशवाद के चरणों तथा औपनिवेशिक राज्य के संदर्भ में उपनिवेशवाद का विश्लेषण किया।

12.2.1 उपनिवेशवाद क्या है?

उपनिवेशवाद उतनी ही आधुनिक एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जितना कि औद्योगिक पूंजीवाद। यह प्रक्रिया किसी उपनिवेश के आधुनिक ऐतिहासिक विकास की उस विशेष अवस्था का वर्णन करती है जो पारंपरिक अर्थव्यवस्था और आधुनिक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करती है। यह एक भली-भांति रची गई संपूर्ण इकाई है, एक विशिष्ट सामाजिक संरचना है जिसमें समाज और अर्थव्यवस्था का मुख्य नियंत्रण किसी विदेशी पूंजीवादी वर्ग के हाथों में होता है। औपनिवेशिक संरचना का रूप पूंजीवाद के ऐतिहासिक विकास की बदलती हुई परिस्थितियों के साथ विश्वव्यापी व्यवस्था की तरह बदलता है।

उपनिवेशवाद को एक विशिष्ट संरचना के रूप में देखना ही उचित है। जो भी उपनिवेशवाद के दौरान हुआ वह केवल किसी पारंपरिक अर्थव्यवस्था में विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व की घुसपैठ नहीं थी जैसा कि कुछ विद्धान मानते हैं। ऐसा भी नहीं था कि जातीय अहंकार से भरे हुए और बेहतर हथियारों से लैस श्वेत गवर्नरों ने उपनिवेश के लोगों में व्याप्त अधीनता, उनके भोलेपन का लाभ उठाकर उन पर कब्जा कर लिया था। यह दृष्टिकोण कि ''आधुनिक साम्राज्य वे अंतर्राष्ट्रीय संगठन थे जो विश्व के संसाधनों को संघटित करने के लिए गठित किए गए'' (हॉपकिन्स, 1999) भी अधूरा है; यह उपनिवेशों पर नहीं बल्कि महानगरों पर ध्यान केंद्रित करता है। कोई भी उपनिवेश परिवर्ती अर्थव्यवस्था भी नहीं था जो समय मिलने पर अंततः एक समृद्ध पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में विकसित हो जाता। यह कहना भी सही नहीं है कि उपनिवेश अपने पूंजीवादी-पूर्व अवशेषों के कारण ''अवरुद्ध विकास'' की स्थिति की हानि उठा रहे थे। मोरिस डी. मोरिस जैसे कई समर्थकों ने उपनिवेशवाद का चित्रण आधुनिकीकरण, आर्थिक विकास और पूंजीवाद के प्रतिरोपण के लिए किए जा रहे प्रयास के रूप में किया जो उपनिवेशों में परंपरा की प्रतिबंधित भूमिका के कारण सफल न हो सका।

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था न तो पूंजीवादी थी और न ही पूंजीवाद से पहले की थी बल्कि वह औपनिवेशिक थी यानी एक मिश्रित संरचना थी। उपनिवेशवाद पूंजीवाद का बिगड़ा हुआ रूप था। विश्व अर्थव्यवस्था के साथ समाकलन से उपनिवेशों में

पूंजीवाद नहीं आया। उपनिवेश पश्चिमी देशों की छवि-प्रति के रूप में विकसित नहीं हुए– वह उसका एक अन्य, विपरीत, अविकसित छोर थे। उपनिवेशवाद ने सामाजिक तथा उत्पादक शक्तियों को विकसित करने की बजाय अविकसित किया जिससे अंतर्विरोध बढ़े और अगली व्यवस्था के लिए रास्ता तैयार हुआ।

12.2.2 परिभाषा

उपनिवेशवाद औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का आंतरिक विघटन और बाहरी एकीकरण है तथा पूंजी के विस्तृत उत्पादन को उपनिवेश में नहीं बल्कि साम्राज्यवादी महानगरों में लगाता है।

उपनिवेशवाद एक सामाजिक संरचना है, जिसमें सामंतवाद से लेकर छोटी-मोटी वस्तुओं के उत्पादन और कृषक, औद्योगिक तथा वित्तीय पूंजीवाद जैसे उत्पादन के विभिन्न जरिए एक साथ विद्यमान रहते हैं। पूंजीवाद के विपरीत जहां उत्पादन के साधनों के मालिक को लाभ पहुंचता है वहां उपनिवेशवाद में लाभ राज्य-सत्ता पर नियंत्रण रखने वाले पक्ष को मिलता है। जब हम उपनिवेशवाद को बजाय उत्पादन के साधन की तरह समझने के एक सामाजिक संरचना की तरह देखते हैं तो हम मूलभूत अंतर्विरोधों को वर्ग के संदर्भ में नहीं बल्कि समाज के संदर्भ में देखते हैं। इस प्रकार हमारे यहां औपनिवेशिक ताकत के विरुद्ध किसी वर्ग संघर्ष के बजाय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष किया गया। समाज में मूलभूत अंतर्विरोधों की प्रकृति राष्ट्रीय है न कि वर्गीय; औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध संघर्ष की प्रकृति राजनीतिक है।

12.2.3 उपनिवेशवाद की मुख्य विशेषताएं

उपनिवेशवाद की एक मुख्य विशेषता है कि इसके तहत उपनिवेश का अधीनस्थ स्थिति में विश्व पूंजीवादी व्यवस्था में एकीकरण किया जाता है। यह जुड़ाव मुख्यतः व्यापार और पूंजी के जरिए होता है और इस प्रक्रिया पर नियंत्रण औद्योगिक देशों (मेट्रोपोलिस) का रहता है। असमान विनिमय उपनिवेशवाद की एक विशेषता है। यह असमान विनिमय मेट्रोपोलिस (औद्योगिक साम्राज्यवादी देश जैसे ब्रिटेन और फ्रांस) और उपनिवेश की अर्थव्यवस्थाओं के मध्य होता है, और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर श्रम के असमान विभाजन के रूप में होता है। श्रम के असमान विभाजन से अभिप्राय है कि मेट्रोपोलिस उच्च प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से उच्च श्रेणी का सामान तैयार करते थे और उपनिवेश निम्न स्तर की प्रौद्योगिकी को प्रयोग में लाते हुए निम्न स्तर के सामान का उत्पादन करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में रेलवे के विकास का ढांचा ब्रितानी उद्योग के हितों के अनुरूप था। भारतीय राष्ट्रवादी नेता बाल गंगाधर तिलक ने इसे दूसरे की पत्नी को सजाने जैसा काम कहा। उपनिवेश बाहरी तौर पर विश्व बाजार से जुड़ा हुआ था लेकिन भीतरी तौर पर वह विश्व बाजार से विलग था। इसका कृषि क्षेत्र इसके उद्योगों के नहीं बल्कि मेट्रोपोलिस की अर्थव्यवस्था और विश्व बाजार के काम आता था। अनावश्यक निर्यात और लोक सेवाओं तथा सशस्त्र सेनाओं पर सत्ता के खर्च ने उपनिवेश की सम्पदा सोखने का काम किया। विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व उपनिवेशवाद की चौथी विशेषता है। इस तरह से असमान विनिमय, बाहरी एकीकरण और भीतरी विघटन, धन-सम्पदा की निकासी और विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व को उपनिवेशवाद की चार मुख्य विशेषताओं के रूप में समझा जा सकता है।

12.3 औपनिवेशिक राज्य

औपनिवेशिक राज्य समाज तथा औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के ढांचे और क्रियान्वयन का एक अभिन्न अंग है। यह वह तंत्र है, जिसके द्वारा मेट्रोपोलिस का पूंजीवादी वर्ग उपनिवेश का शोषण करता है और उस पर नियंत्रण रखता है। औपनिवेशिक राज्य अपनी मूल भूमि के पूंजीवादी वर्ग के दीर्घकालीन हितों को समग्र रूप से साधता है।

उपनिवेशवाद के तहत उपनिवेश के सभी देशज वर्ग प्रभुत्व को झेलते हैं। कोई भी वर्ग उपनिवेशवाद में सहभागी नहीं होता। इस प्रकार जैसे ही उपनिवेश उच्चतम वर्गों के हितों के विरुद्ध जाता है, यह वर्ग तक उसका विरोध करना शुरू कर सकते हैं। यह याद करना यहां उपयोगी है कि बड़े जमीदारों ने पोलैंड और मिस्र में उपनिवेश-विरोधी आंदोलन चलाए थे। उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों में, जहां मध्यस्थ तथा देशज वर्ग भी सत्ता वर्ग के अंग होते थे, यही एक प्रमुख अंतर है।

औपनिवेशिक राज्य की भूमिका पूंजीवादी वर्ग से बड़ी होती थी। राज्य स्वयं उत्पादन के अधिशेष को अपनाने का प्रमुख माध्यम था। मेट्रोपोलिस के शासक वर्ग ने औपनिवेशिक राज्य का उपयोग औपनिवेशिक समाज को नियंत्रित करने के लिए किया।

औपनिवेशिक राज्य ने भीतरी तथा बाहरी खतरों से अपनी सुरक्षा तथा कानून और व्यवस्था का आश्वासन सुदृढ़ किया। साथ ही उसने औपनिवेशिक हितों की विरोधी देशज आर्थिक ताकतों का भी दमन किया। औपनिवेशिक राज्य ने राष्ट्रीय एकता में बाधा पहुंचाने के लिए जातियों और समुदायों की अस्मिताओं को सक्रियता से प्रोत्साहित किया। औपनिवेशिक राज्य वस्तुओं का उत्पादन करने और लाभ सहित पूंजी को अपनाने के लिए परिस्थितियां बनाने में सक्रियता से लगा हुआ था। उपनिवेश के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा कानूनी ढांचे को व्यापक स्तर पर उत्पादन करने लायक बनाने के लिए उपनिवेश में बदलाव लाना दूसरा महत्वपूर्ण कार्य था।

औपनिवेशिक राज्य और औपनिवेशिक संरचना के बीच एक निश्चित और प्रत्यक्ष संबंध होता है। इसलिए उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष पर राजनीति का रंग चढ़ाना आसान होता है। औपनिवेशिक नियंत्रण का ताना-बाना सतह पर ही रहता है और औपनिवेशिक शासन का विदेशीपन काफी स्पष्ट होता है। इस कारण से उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष में रत लोगों के लिए यह बहुत मुश्किल नहीं होता कि वे इस औपनिवेशिक राज्य के इसके मूल देश के औद्योगिक पूंजीपति वर्ग से सीधे संबंधों को उजागर कर सकें। उदाहरण के लिए, भारतीय नेताओं ने 19वीं शताब्दी में ही यह जान लिया था कि भारत में ब्रिटिश राज्य का सीधा संबंध ब्रिटेन के पूंजीपति वर्ग से है। औपनिवेशिक राज्य का नियंत्रण स्पष्ट तौर पर विदेश से होता है और उपनिवेश के निवासियों का नीति-निर्माण और निर्णय दोनों से ही अलगाव स्पष्ट होता है।

औपनिवेशिक राज्य नेतृत्व और सम्मति के बजाय कुल मिलाकर प्रभुत्व और बल प्रयोग पर निर्भर करता था। हालांकि किसी हद तक यह किसी बुर्जआ राज्य की

तरह काम करता था जिसमें कानून के नियम, सम्पत्ति संबंधों, नौकरशाही और संवैधानिक कार्यक्षेत्र के तहत औपनिवेशिक असंतोष से निपटना होता था। हम भारत के संदर्भ में इस पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

12.4 उपनिवेशवाद की अवस्थाएं

उपनिवेशवाद की तीन विशिष्ट अवस्थाएं थीं। कुछ देश केवल एक या दो अवस्थाओं से ही गुज़रे। भारत केवल पहली और दूसरी अवस्था से गुज़रा। मिस्र केवल तीसरी और इंडोनेशिया पहली तथा तीसरी अवस्था से गुज़रा। यह अवस्थाएं 200 वर्षों से अधिक समय तक रहीं। अधीनता के तरीके समय के साथ उसी तरह बदले जैसे औपनिवेशिक नीति, शासन और उसकी संस्थाएं, संस्कृति, विचार तथा विचारधाराएं बदलीं। इसका हालांकि यह अर्थ नहीं है कि यह अवस्थाएं विशुद्ध रूप में अस्तित्व में रहीं। एक अवस्था की अधीनता के तरीके बाद की अवस्थाओं में जारी रहे।

यह अवस्थाएं चार घटकों का परिणाम थीं :

- विश्व व्यवस्था के रूप में पूंजीवाद का ऐतिहासिक विकास,
- मेट्रोपोलिस के समाज, अर्थव्यवस्था और राज्य-व्यवस्था में परिवर्तन, (उदाहरण के लिए ब्रिटेन में राजनीतिक या आर्थिक तब्दीलियां),
- विश्व अर्थव्यवस्था में उसकी स्थिति में बदलाव, और
- उपनिवेश का स्वयं का ऐतिहासिक विकास।

12.4.1 पहली अवस्था : एकाधिकार व्यापार तथा लूटपाट

पहली अवस्था के दो मूलभूत उद्देश्य थे। व्यापार को अधिक लाभकारी बनाने के लिए देसीनिर्मित उत्पादों को सस्ते दाम पर खरीदना था। इसके लिए स्थानीय या यूरोपीय प्रतिस्पर्धियों को दूर रखा गया। क्षेत्रीय विजय ने स्थानीय व्यापारियों को लाभप्रद व्यापार से दूर रखा जबकि प्रतिस्पर्धी यूरोपीय कंपनियां युद्ध में पराजित हो गईं। इस तरह पहली अवस्था की विशिष्टता व्यापार पर एकाधिकार करना था।

दूसरे, उपनिवेश की राजनीतिक विजय ने लूटपाट और सम्पदा के अधिग्रहण करने का अवसर दिया। उदाहरण के लिए, पहली अवस्था में भारत से बड़ी मात्रा में सम्पदा ब्रिटेन तक पहुंचाई गई।

यह उस समय ब्रिटेन की राष्ट्रीय आय का दो या तीन प्रतिशत था। पहली अवस्था में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं किए गए। सिर्फ पारंपरिक अर्थव्यवस्था और राज्य व्यवस्था पर औपनिवेशिक व्यवस्था को लाद दिया गया।

12.4.2 दूसरी अवस्था : मुक्त व्यापार का युग

उपनिवेश में मेट्रोपोलिस (केन्द्रीय देश) के औद्योगिक बुर्जुआ (पूंजीपति) वर्ग की दिलचस्पी निर्मित वस्तुओं के लिए उपलब्ध बाजारों में थी। इसके लिए निर्मित वस्तुओं के आयात की खरीद का भुगतान करने के लिए उपनिवेशों से निर्यात

बढ़ाना आवश्यक था। मेट्रोपोलिस का बुर्जुआ वर्ग उपनिवेश का विकास कच्चे माल के उत्पादक के रूप में भी करना चाहते थे। उपनिवेश से निर्यात बढ़ाना व्यापारियों को लाभांश तथा उच्च वेतन देने में भी मदद करता। औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग ने लूटपाट का विरोध इस आधार पर किया कि यह लूटपाट उस बतख को मार देगी जो सोने के अंडे देती है। इस वर्ग का हित उपनिवेश की लूटपाट में नहीं बल्कि उसके व्यवस्थित दोहन में था। यह वर्ग उपनिवेश का इस्तेमाल कच्चे माल की आपूर्ति के लिए और फिर निर्मित माल की खपत के लिए बाजार के रूप में करना चाहता था।

व्यापार वह प्रणाली थी, जिसके माध्यम से इस अवस्था में उपनिवेश से प्राप्त हुआ लाभ अधिग्रहीत किया जाना था। इस अवस्था में उपनिवेश का आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक ढांचा नए तरीके से शोषण करने के लिए रूपांतरित किया गया। इस अवस्था का नारा था– विकास और आधुनिकीकरण। उपनिवेश को वैश्विक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था और स्वदेश से जोड़ना था। पूंजीवादियों को बागान, व्यापार, यातायात, खनन और उद्योग का विकास करने की अनुमति दी गई। निर्यात के लिए भारी मात्रा में कच्चा पदार्थ बंदरगाहों पर ले जाने की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए यातायात और संचार व्यवस्थाएं विकसित की गईं। उदारवादी साम्राज्यवाद अब नई राजनीतिक विचारधारा थी। शासकों ने उपनिवेशवाद का लक्ष्य लोगों को स्वशासन में प्रशिक्षित करना बताया।

12.4.3 तीसरी अवस्था : वित्तीय पूंजी का युग

तीसरी अवस्था में बाज़ारों, कच्चे माल के स्रोतों और अनाज के लिए भयंकर संघर्ष की स्थिति देखी गई। विकसित औद्योगिक देशों में पूंजी के बड़े स्तर पर संचय ने विदेश में निवेश करने के रास्ते खोजने की आवश्यकता पैदा की। यह स्वार्थ वहां बेहतर सिद्ध हुए जहां साम्राज्यवादी शक्तियों के अपने उपनिवेश थे। इससे साम्राज्यवादी ताकत के हितों की सुरक्षा के लिए उपनिवेश पर अधिक नियंत्रण की स्थिति बनी।

विचारधारा के क्षेत्र में उदारवाद का स्थान प्रतिक्रियावाद ने ले लिया। लोगों को स्वशासन में प्रशिक्षित करने की बात अब हवा हो गई। नियंत्रण की आवश्यकता बढ़ी। अब स्वशासन की बात नहीं की जा रही थी, बल्कि प्रबुद्ध तानाशाही नई विचारधारा थी जिसके अनुसार औपनिवेशिक जनता को उन बच्चों की तरह देखा जाता था जिन्हें हमेशा अभिभावकों की जरूरत पड़ने वाली थी।

इस अवस्था में एक प्रमुख अंतर्विरोध यह था कि उपनिवेश महानगरीय पूंजी को जज़्ब नहीं कर पा रहे थे या पहले की अवस्थाओं में जरूरत से ज्यादा हुए शोषण के कारण कच्चे माल का अपना निर्यात नहीं बढ़ा पा रहे थे। सीमित आधुनिकीकरण की एक योजना इस समस्या का हल निकालने के लिए अमल में लाई गई लेकिन उपनिवेशवाद की तार्किकता को पलटा नहीं किया जा सका। उपनिवेश के और अधिक शोषण में अल्पविकास बाधा बना। इस अवस्था में उपनिवेशवाद का अपना अंतर्विरोध स्पष्ट रूप से सामने आया। उपनिवेशवाद की एक जरूरत यह थी कि उपनिवेशों का विकास और आधुनिकीकरण हो। विदेशी माल को खरीद सकने की क्रय क्षमता उनमें बढ़े और साथ ही विदेशी पूंजी को जज़्ब करने की क्षमता भी। लेकिन उपनिवेशवाद की प्रक्रिया ने ही उपनिवेशों का

दोहन इस प्रकार से किया था कि विकास और आधुनिकीकरण की संभावनाएं कुंद हो गयी थी। ऐसे में उपनिवेशों का बहुत अधिक शोषण भी नहीं किया जा सकता था।

तीसरी अवस्था बहुधा आरंभ ही नहीं हो पाई। उपनिवेशवाद ने कुछ उपनिवेशों की अर्थव्यवस्था को इतना जर्जर कर दिया था कि वह किसी प्रकार के पूंजी निवेश को जज़्ब ही नहीं कर सकीं। कई उपनिवेशों में शोषण के पुराने तौर-तरीके जारी रहे। उदाहरण के लिए, भारत में तीसरी अवस्था में भी पहली दोनों अवस्थाएं ही मुख्य रूप से जारी रहीं।

12.5 विभिन्न क्षेत्रों में उपनिवेशवाद

अभी तक आपने तीन अवस्थाओं में बंटे औपनिवेशिक विस्तार का सामान्य ढांचा देखा। अगले दो भागों में हम विशेष उपनिवेशों का अध्ययन करेंगे।

12.5.1 अफ्रीका

अफ्रीका पर विजय उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में हुई। 1880 तक भी अफ्रीका के केवल 20 प्रतिशत हिस्से पर यूरोपीय शासन था। औद्योगिक क्रांति के यूरोप के अन्य देशों में फैल जाने की वजह से उपनिवेशों की खोज में प्रतिद्वंद्विता बढ़ी। उभरती हुई औद्योगिक ताकतों ने सूर्य की रोशनी में स्थान तलाशने आरंभ किए। दो करोड़ अस्सी लाख वर्ग किलोमीटर के महाद्वीप को विभाजित कर दिया गया और संधियों और विजय की दो रणनीतियों के तालमेल से इस पर यूरोपीय सत्ताओं ने कब्जा कर लिया।

1939 में अफ्रीका में मात्र 12 हजार औपनिवेशिक प्रशासक थे, जो स्थानीय मुखियाओं की मदद से 4 करोड़ 30 लाख अफ्रीकियों पर राज करते थे।

विजय के तीन युग

पहली अवस्था 1880 से 1990 में विजय और कब्जे का कालखंड थी। 1910 के बाद औपनिवेशिक व्यवस्था ने अपने को मजबूत किया। 1919 से 1935 तक दूसरी अवस्था में स्वतंत्रता आंदोलन हुए। तीसरी अवस्था 1935 के बाद की है। कुल 45 वर्षों में 94 प्रतिशत अफ्रीका से औपनिवेशिक व्यवस्था उखाड़ दी गई। औपनिवेशिक शासन औसतन 100 वर्षों तक चल पाया। अफ्रीका में ब्रितानी क्षेत्र में नाइजीरिया, गोल्ड कोस्ट, गांबिया, सिएरा लिओन, केन्या, टांगानिका, न्यासालैंड, युगांडा, उत्तरी और दक्षिणी रोडेशिया और दक्षिण अफ्रीका आते थे। अल्जीरिया, मोरक्को, कैमरून, फ्रेंच-कांगो, ट्यूनिशिया और मेडागास्कर प्रमुख फ्रांसीसी उपनिवेशों में से थे।

प्रभाव

अफ्रीका में उपनिवेशवाद का असर बहुत गंभीर था। आत्मनिर्भर अफ्रीकी अर्थव्यवस्था को औपनिवेशिक आधिपत्य ने नष्ट किया, परिवर्तित किया और अपने अधीन कर लिया। अफ्रीकी समाज में औपनिवेशिक आधिपत्य के प्रभाव के कारण वर्ग विभेदीकरण पैदा हुआ। अफ्रीकी देशों के आपसी संबंध तथा विश्व के अन्य देशों से

संबंध टूट गए। वित्तीय पूंजी की ताकत के बूते यूरोपीय शक्तियों ने अफ्रीका की अर्थव्यवस्था को औपनिवेशिक निर्भरता में बदल दिया। स्वेज नहर के कर्जे से मिस्र उधारी में फंस कर रह गया।

औपनिवेशिक शासन के प्रभाव की विभिन्न व्याख्याएं हैं। साम्राज्यवादी विचारधारा के अनुसार अफ्रीकियों ने औपनिवेशिक शासन का स्वागत किया। सामाजिक डार्विनवाद उपनिवेशवाद का यह कहते हुए समर्थन करता है कि कमजोर जातियों पर अधिपत्य यूरोपीय जाति की प्राकृतिक श्रेष्ठता का अवश्यंभावी परिणाम था। औपनिवेशिक शासक और बाद के समर्थक दोनों ने ही औपनिवेशिक शासन को सौभाग्य माना। ऐसा कहा जाता है कि यदि उपनिवेश अफ्रीकी औपनिवेशिक व्यवस्था का हिस्सा न होते तो आधुनिक आधारिक संरचना, स्वास्थ्य और शिक्षा उपनिवेशों में नहीं पहुंच सकते थे। डी. के. फ़ील्डहाउस जैसे अन्य विद्वानों ने इस प्रभाव को ''कुछ अच्छा, कुछ बुरा'' कहा।

उपनिवेशवाद के पीछे मूल उद्देश्य बेशक साम्राज्यवादी हितों को संतुष्ट करना था। उपनिवेशवाद के यदि कोई सकारात्मक प्रभाव थे तो वह गौण थे; स्पष्ट तौर पर वह इरादतन नहीं थे। नकारात्मक प्रभाव बहुत बड़े थे और कई मायनों में उनकी विरासत आज भी देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए, आज अफ्रीका के कई हिस्से संजातीय संघर्षों से घिरे हुए हैं। इन संघर्षों का एक मुख्य कारण यह है कि पांरपरिक अफ्रीका पर औपनिवेशिक शासकों ने मनमाने ढंग से बनावटी राजनीतिक सीमा रेखाओं को थोप दिया था।

12.5.2 मिस्र

मिस्र, फ्रांस और ब्रिटेन दोनों के अधीन था। वह औद्योगिक पश्चिमी देशों के लिए कृषि उत्पादों और कच्चे माल का भंडार था। मिस्र में उपनिवेशवाद की दो अवस्थाएं वस्तुतः एक ही में मिल गईं।

ब्रिटेन ने अपने वस्त्र उद्योग के लिए मिस्र का विकास कपास के आपूर्तिकर्त्ता के रूप में किया। 1914 तक मिस्र में कपास का उत्पादन कुल कृषि उत्पादन का 43 प्रतिशत था। 1913 में कपास का 85 प्रतिशत निर्यात होता था। एक ही फसल पर आधारित अर्थव्यवस्था का होना मिस्र के लिए अनर्थकारी था क्योंकि मिस्र आवश्यक खाद्य आपूर्ति के लिए आयात पर निर्भर हो गया था। कपास पर विदेशियों का पूर्ण नियंत्रण था– जिस जमीन पर खेती की जाती थी उस पर नियंत्रण से लेकर उसके मालिकाना हक तक, कपास परिष्करण और कपास शोधन उद्योग से लेकर उन जहाजों पर भी पूर्ण नियंत्रण था जिनमें कपास ले जाई जाती थी। मिस्र में कपास की एक भी मिल नहीं थी।

मिस्र वित्त पूंजी के निवेश का मूल्यवान क्षेत्र भी था। उद्योग और निर्माण में पांच प्रतिशत पूंजी, व्यापार और परिवहन में 12.36 प्रतिशत तथा 79 प्रतिशत पूंजी सरकारी ऋण, गिरवी तथा बैंकों में लगाई जाती थी। विदेशी शक्तियों द्वारा शोषण किए जाने से मिस्र ऋणभार में फंस गया था।

प्रथम विश्वयुद्ध में मिस्र का पूरी तरह शोषण हुआ था। उसके प्राकृतिक संसाधन, मानवशक्ति और अर्थव्यवस्था युद्ध में झोंक दी गई। सेना ने फसलें जब्त कर लीं।

मिस्र के राष्ट्रीय बैंक के स्वर्ण भंडार को ब्रितानी खज़ाने ने हथिया लिया। 1914 में मिस्र ब्रिटेन का संरक्षित राज्य बन गया था।

12.5.3 दक्षिण-पूर्व एशिया

दक्षिण-पूर्व एशिया में उपनिवेशवाद की स्थिति पंद्रहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से लेकर बीसवीं शताब्दी के मध्य तक अर्थात् पांच शताब्दियों तक बनी रही। मसालों के व्यापार में स्वर्ण-काल देखने के बावजूद दक्षिण-पूर्व एशिया चीनी, चाय, कॉफी, चावल, धातु, रबर और तेल जैसे मूल कच्चे पदार्थों के आपूर्तिकर्त्ता के रूप में महत्वपूर्ण बना रहा। उपनिवेशवाद का इस क्षेत्र में काफी प्रभाव था, थाइलैंड जैसे उन देशों पर भी जो औपचारिक रूप से उपनिवेश नहीं बने थे। शासन के पारंपरिक तरीके गायब हो गए, व्यापार प्रक्रियाएं बाधित हुईं और इन क्षेत्रों की समृद्ध सांस्कृतिक पंरपराएं नष्ट हो गईं।

12.6 भारत

भारत को एक औपनिवेशिक समाज का क्लासिकीय प्रतिमान माना जाता है। भारत में उपनिवेशवाद का अध्ययन हमें उपनिवेशवाद की कार्यात्मक पद्धति के बारे में सामान्यतः बहुत कुछ बता सकता है। आइए देखें कि भारत में उपनिवेशवाद की विभिन्न अवस्थाएं किस तरह कार्य करती थीं।

12.6.1 पहली अवस्था

पहली अवस्था में व्यापार पर एकाधिकार और राजस्व को हड़पना जैसे दोनों उद्देश्य पहले बंगाल और दक्षिण भारत के कुछ हिस्सों पर और फिर बाकी भारत पर विजय प्राप्त करके बड़ी तेजी से परिपूर्ण किए गए। इसके बाद ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपनी राजनीतिक शक्ति भारतीय व्यापार और हस्तशिल्प पर एकाधिकारी नियंत्रण हासिल करने के लिए इस्तेमाल की। भारत के व्यापारी बर्बाद कर दिए गए और जुलाहों को उनका सामान सस्ता बेचने को मजबूर किया गया। कंपनी के एकाधिकार ने जुलाहों का सर्वनाश कर दिया। अगली अवस्था में सस्ती निर्मित वस्तुओं ने उनका खात्मा ही कर दिया।

ब्रितानी अधिकारियों ने सम्पदा की निकासी को स्वीकारा। ईस्ट इंडिया कंपनी के निदेशक मंडल के उपाध्यक्ष के शब्द कुछ इस तरह हैं : ''हमारा तंत्र बहुत कुछ एक स्पंज की तरह काम करता है, जो गंगा के तटों से सब अच्छी चीजें सोख लेता है और टेम्स के तटों पर उन्हें निचोड़ कर टेम्स में मिला देता है।''

इस अवस्था में उपनिवेशी समाज में कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुए। केवल सैन्य संगठन, प्रौद्योगिकी और राजस्व प्रशासन के शीर्ष स्तर पर ही परिवर्तन किए गए। भूमि राजस्व गांवों की मौजूदा व्यवस्थाओं को छेड़कर अधिग्रहित किया जा सकता था। विचारधारा के क्षेत्र में भी पारंपरिक व्यवस्थाओं के प्रति आदर भाव था जबकि दूसरे दौर में पारंपरिक मूल्यों की भर्त्सना की गई। जिस आदर भाव से विलियम जोन्स जैसे ब्रितानी भारतविदों ने संस्कृत को अपनाया था वह मेकॉले के पारंपरिक शिक्षा को बाद में अस्वीकार करने के ठीक विपरीत था। मेकॉले का मानना था कि भारत की संपूर्ण पारंपरिक शिक्षा किसी अच्छे पश्चिमी पुस्तकालय की अलमारियों को पुस्तकों से भरने के लिए नाकाफी है।

12.6.2 दूसरी अवस्था

मुक्त व्यापार के युग ने भारत को खाद्यान्न और कच्चे माल के आपूर्तिकर्त्ता और निर्मित सामान के बाजार के रूप में उभरते हुए देखा। मेनचेस्टर में बने कपड़े का आयात 1860 के 96 लाख स्टर्लिंग से बढ़कर 1900 में 27 करोड़ स्टर्लिंग का हो गया था। इस प्रतिस्पर्धा से पारंपरिक जुलाहे बर्बाद हो गए। औद्योगीकरण के बजाय उद्योगों की अवनति या अनौद्योगीकरण की प्रक्रिया हुई। इतिहासकार ए. के. बागची के अनुसार, मध्य गंगा क्षेत्रों में 1809 से 1813 के दौरान लोगों की आजीविका में उद्योगों का महत्व 1901 के जनगणना वर्ष तक घटकर आधा हो गया था।

शिवसुब्रमनियम के आकलन बताते हैं कि ब्रितानी शासन के उत्तरार्द्ध में भारत में प्रति व्यक्ति आय लगभग स्थिर थी। दादा भाई नौरोजी के हिसाब से प्रति व्यक्ति आय 20 रुपए सालाना थी।

रेलवे का विस्तार किया गया और एक आधुनिक डाक और तार व्यवस्था चालू की गई। प्रशासन को अधिक व्यापक और विस्तृत बनाया गया ताकि गांवों तक आयात की घुसपैठ हो और कच्चा माल आसानी से बाहर लाया जा सके। पूंजीवादी व्यावसायिक संबंधों पर बल दिया जाना था। कानूनी व्यवस्था में भी सुधार किया जाना था जिससे अनुबंध की वैधता कायम रखी जा सके। नए प्रशासन को चलाने के लिए 'बाबू' तैयार करने के उद्देश्य से आधुनिक शिक्षा लागू की गई। पाश्चात्य प्रवृत्तियों से ब्रितानी सामान की मांग में वृद्धि किए जाने की अपेक्षा भी थी।

तत्कालीन संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के लिए पारंपरिक संस्कृति की भर्त्सना किए जाने की आवश्यकता थी। प्राच्यवाद की विचारधारा भारतीय संस्कृति और परंपरा की प्रशंसक थी। लेकिन यह प्रशंसा भारत के अतीत की थी उसके 19वीं शताब्दी के वर्तमान की नहीं। एक तरह से प्राच्यवाद ने भारतीयों की अपने वर्तमान को समझने की इच्छा शक्ति को हतोत्साहित ही किया। इसके विपरीत नई विचारधारा विकास पर आधारित थी। भारत का अविकसित रहना नई विचार की वांछित इच्छा का परिणाम नहीं बल्कि उपनिवेश के क्रियाकलापों का अवश्यंभावी परिणाम था।

12.6.3 तीसरी अवस्था

तीसरी अवस्था को बेशक वित्तीय पूंजी के युग के नाम से जाना जाता है। पूंजी का एक बड़ा हिस्सा रेलवे में लगाया गया, व्यापार एवं भारत सरकार को ऋण के तौर पर दिया गया और खेत-बागानों, कोयला-खनन, जूट की मिलों, जहाजरानी तथा भारत में बैंकिंग में भी पूंजी लगाई गई।

इस अवस्था में विश्व में ब्रिटेन की स्थिति को नए साम्राज्यवादी देशों की प्रतिस्पर्धा से लगातार चुनौतियां मिल रही थीं। परिणामस्वरूप भारत पर उसका नियंत्रण और भी मजबूत किया गया। प्रतिद्वंद्वी साम्राज्यवादी ताकतों से प्रतिस्पर्धा का मुकाबला करने के लिए नियंत्रण को सुदृढ़ किया जाना आवश्यक था। भारत के वायसराय लॉर्ड कर्ज़न ने लिखा थाः 'भारत के बाहर निवेश के अन्य रास्ते धीरे-धीरे केवल ब्रितानी पूंजी से नहीं बल्कि विश्व के सभी धन पैदा करने वाले देशों की पूंजी से

भरते जा रहे हैं; अगर ऐसा ही जारी रहा तो वह दिन जल्द ही आएगा जब ब्रितानी पूंजी का प्रवाह उन बैंकों से बाहर निकल कर जिनमें वह लंबे समय तक पड़ी रहीं, बाहर नए रास्तों पर जाना चाहेगा और आर्थिक गुरुत्वाकर्षण के नियम से अपनी राह भारत में खोजेगा, जहां के लिए उसे इस बात से भी आकर्षित होना चाहिए कि वहां ब्रितानी संस्थाओं और कानून की सुरक्षा उसे प्राप्त है।'

प्रतिक्रियावादी साम्राज्यवादी नीतियों ने लिटन और कर्ज़न के वायसराय काल की विशिष्टता थीं। स्वशासन की सब बातें समाप्त हो गईं और भारत के नादान लोगों पर ब्रिटेन का स्थाई अधिदेश शासन घोषित कर दिया गया।

संबंधों में शिथिलता

भारत में औद्योगिक विकास को बल तब मिला जब विश्व अर्थव्यवस्था से भारत का जुड़ाव कमजोर पड़ा या अस्थायी रूप से टूट गया। यह महत्वपूर्ण बात है कि वैश्विक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के संकट के दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था को फलने-फूलने का मौका मिला। दो विश्वयुद्धों (1914-18, 1938-45 और विशाल मंदी (1934) के दौरान भारत में विदेशी व्यापार और विदेशी पूंजी का आयात कम हो गया और इससे भारत के स्वतंत्र आर्थिक विकास को सुअवसर मिला। लेकिन औपनिवेशिक संबंध क्योंकि टूटे नहीं थे केवल शिथिल पड़ गए थे इसलिए भारत में इस दौरान जो कुछ हुआ वह केवल औद्योगिक विकास था, औद्योगिक क्रांति नहीं।

12.7 ब्रिटिश औपनिवेशिक राज्य

भारत में अपना शासन कायम रखने और विरोध को कुचलने में ब्रिटेन ने बर्बर तरीकों का प्रयोग किया, यह सब जानते हैं। अक्सर राज्य को वास्तविक दमन नहीं करना पड़ता था; यह बात ही विद्रोह रोकने के लिए काफी थी कि राज्य के पास दमन करने की क्षमता थी। इसलिए ब्रितानियों के लिए एक बड़ी, अनुशासित, कार्यकुशल और निष्ठावान सेना रखना प्रमुख आवश्यकता थी क्योंकि सशस्त्र सेना ही निर्णायक विश्लेषण में ब्रितानी हितों की अंतिम गारंटी थी। लेकिन सामान्यतः अपने शासन को जारी रखने के लिए और साम्राज्यवादी आधिपत्य के स्थायित्व के लिए, ब्रिटिश औपनिवेशिक राज्य कई प्रकार के वैचारिक संसाधनों पर भरोसा करता था। इस दृष्टि से भारत में ब्रितानी औपनिवेशिक राज्य, हालांकि सीमित ढंग से एक प्रभुत्वकारी या अर्ध-प्रभुत्वकारी राज्य था।

प्रभुत्वकारी या अर्ध-प्रभुत्वकारी राज्य से हमारा अभिप्राय ऐसी शासन-व्यवस्था से है जिसकी सत्ता सिर्फ शक्ति और बल पर ही आधारित नहीं होती और आंशिक रूप से ही सही लेकिन यह लोगों की सहमति को भी अपना आधार बनाती है या बनाने की इच्छा रखती है। भारत में औपनिवेशिक राज्य की अर्ध-प्रभुत्वकारी बुनियाद के कई स्रोत थे। पैक्स-ब्रिटानिका की विचारधारा, भारत में अंग्रेजों द्वारा शुरू की गई कानून व्यवस्था, अंग्रेज अधिकारियों की जनता के अभिभावक या माई-बाप की छवि, और साथ ही ब्रिटिश संचालित विचारधारात्मक, वैधानिक, न्यायिक तथा प्रशासनिक संरचनाएं इन सभी ने मिलकर भारत में औपनिवेशिक शासन को एक अर्ध-प्रभुत्वकारी आधार प्रदान किया।

यह धारणा कि ब्रितानी शासन की नींव अविचल है, इसकी मजबूती के वातावरण और राज की सामान्य प्रतिष्ठा ने भी साम्राज्यवादी अधिपत्य को कायम रखा। यह दर्शाकर कि राज को उखाड़ फेंकने के प्रयास व्यर्थ हैं, राज की प्रतिष्ठा ने ब्रितानी शासन को बनाए रखने में उतनी ही अहम् भूमिका निभाई जितनी उसके पीछे खड़ी सशस्त्र सेनाओं ने। राज की प्रतिष्ठा बहुत हद तक उसकी 'स्टील फ्रेम' की शेखी अर्थात् इंडियन सिविल सर्विस में निहित थी और विशेषकर जिला अधिकारी में जो दूरदराज इलाकों में सत्ता का प्रतिनिधित्व करता थाः उपमहाद्वीप में ब्रितानी शासन ने जिसे अपनाया उस ''प्रबुद्ध तानाशाही'' के केंद्र में इंडियन सिविल सर्विस का इस्पाती ढांचा खड़ा हुआ था और विशेषकर जिला अधिकारी के रूप में भारत के सुदूर क्षेत्रों में सरकार का भौतिक प्रतीक भी वही था।''

ब्रिटिश कवि रूडयार्ड किपलिंग की कविता ''अंग्रेजों का एक गीत'' (1893) कुछ इस प्रकार थी :

तुम कानून के अनुयायी बनो
आदेश पालन में मुस्तैद रहो
धरती से बुराई को मिटा दो,
सड़कों पर चलो और खाइयों को पाट दो –
लोगों में शांति स्थापित करो
ताकि मानवता जान सके,
हम ईश्वर के सेवक हैं।

इन सबके पीछे ब्रिटिश लोगों की एक स्वनिर्मित छवि थी, जिसके तहत वे स्वयं को विश्व के नेता और सुधारक के रूप में देखते थे।

इस तरह की राज्य संरचना को राजनीतिक क्षेत्र में ''अर्ध-प्रभुत्वकारी संस्थाओं'' पर आधारित कुछ विशेष नीतियों की आवश्यकता थी। एक ओर राज्य के लिए एक भरोसेमंद सामाजिक आधार सुनिश्चित करना था तो दूसरी ओर साम्राज्यवादी-विरोधी ताकतों के प्रभावी समूहों और सामाजिक पहुंच को सीमित करने के लिए रणनीतियां बनानी थीं। देश को चलाने में स्थानीय समर्थकों का सक्रिय सहयोग कई प्रकार की युक्तियों से हासिल किया गया जैसे नौकरियां बांटना, किसी अधिकार के लिए पदवियां और कृपादृष्टि से लेकर उदारवादी वर्गों और निष्ठावानों की 'वैधानिक' राजनीतिक मांगों में रियायतें देना। जहां तक साम्राज्यवाद विरोधी असंतोष के फैलने की बात थी तो उसे राजनीतिक सुधारों द्वारा गढ़े गए संवैधानिक अखाड़े के भीतर ही सीमित कर निष्प्रभावी बना दिया जाना था। साम्राज्यवादी-विरोधी ताकतों द्वारा उठाई गई मांगों के लिए दबाव में सही, संवैधानिक रियायतें नियमित रूप से दी जाती थीं।

12.8 उपनिवेशवाद : एक या अनेक?

यदि हम ब्रितानी और फ्रांसीसी औपनिवेशिक शासन को देखें तो यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न परिप्रेक्ष्यों पर आधारित होने के बावजूद दोनों ही ज़मीनी वास्तविकता में

एक ही हैं। कुछ विद्वानों ने एक ही तरह की ज़मीनी वास्तविकता पर तर्क देते हुए कहा है कि सभी तरह के उपनिवेशवाद एक से ही थे। उदाहरण के लिए, इतिहासकार डी. ए. लो इस बात से असहमति प्रकट करते हैं कि उपनिवेशवाद के विभिन्न स्वरूप थे क्योंकि ब्रितानी और फ्रांसीसी उपनिवेशों ने साथ-साथ ही स्वतंत्रता हासिल की। यहां हम उपनिवेशवाद के विभिन्न स्वरूपों पर चर्चा करेंगे।

वालरस्टाइन यह कहेंगे कि एक मूलभूत पैतृकवाद सभी औपनिवेशिक ताकतों की विचारधाराओं में व्याप्त था। लेकिन इस मूलभूत पैतृकवाद ने औपनिवेशिक ताकतों के राष्ट्रीय स्वरूप और इतिहास पर निर्भर रहते हुए अपने आपको विभिन्न तरीकों से अभिव्यक्त किया।

शुरू से ही ब्रितानी औपनिवेशिक नीति के बारे में बिखराव और मितव्ययता की बात कही जाती है। ब्रितानियों ने व्यापारिक कंपनियों का इस्तेमाल उपनिवेश हासिल करने के लिए किया, इस बात पर जोर दिया कि उपनिवेश स्वपोषी हों और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप प्रत्येक उपनिवेश की राजनीतिक संरचना में परिवर्तन किया। ''यह अफ्रीका की दो औपनिवेशिक ताकतों, ब्रिटेन और फ्रांस, के बीच एक आदर्श तुलना है; ब्रिटेन जहां अनुभवसिद्ध, व्यावसायिक, अप्रत्यक्ष शासन करने वाला और अफ्रीकियों से दूरी बनाकर रखने वाला तथा रंगभेद का समर्थक था वहीं फ्रांस गौरव प्राप्ति की कामना करने वाला, प्रत्यक्ष प्रशासन चलाने वाला, अपने तर्क में देकार्तवादी और रंगभेद विरोधी तथा भाइचारे के प्रचारक के रूप में पेश आने वाला था। कोई भी जो ब्रितानी अफ्रीका और फ्रांसीसी अफ्रीका दोनों जगहों पर जाएगा तो इन सामान्यीकरणों में सत्य के अंश जरूर पाएगा। जीवन के रंग यहां अलग-अलग हैं; दोनों औपनिवेशिक सरकारों ने दो विभिन्न संस्कृतियां पैदा कीं। फिर भी जो कोई भी इन जगहों की यात्रा करेगा उसे इन सामान्यीकरणों की गहरी सीमाएं दिखाई देंगी''।

लेकिन व्यावहारिक तौर पर यह अंतर इतने स्पष्ट नहीं थे। फ्रांसीसी जहां सामर्थ्यवान होते थे वहां सीधे शासन करने के बजाय अक्सर वहां के मुखियाओं को समर्थन देते थे। जहां तक अनुभववाद और दे'कार्तवादी तर्क की तुलना का प्रश्न है वह विश्लेषण से अधिक वाद-विवाद का मुद्दा है।

सम्पत्ति और गौरव के पीछे छिपे अभिप्रायों में भेद करना भी अधिक मुश्किल लगता है। ब्रितानी निश्चित रूप से अपने साम्राज्य पर गर्व करते थे और फ्रांसीसियों ने अपने साम्राज्य से निश्चित रूप से लाभ उठाया। जहां तक रंगभेद और भाइचारे का सवाल है, हो सकता है कि फ्रांसीसी पितृत्व फ्रांसीसी सभ्यता की सार्वभौमिक पहुंच के विशिष्ट गुण पर आधारित था जबकि ब्रितानी पितृत्व सभी परंपराओं की समान गुणशीलता के अलावा ब्रितानी संस्कृति की सीमित पहुंच पर आधारित था। फिर भी व्यावहारिक तौर पर केन्या और अल्जीरिया जैसे दो उपनिवेशी क्षेत्रों में आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक भेदभाव के समानांतर स्तर देखे जा सकते थे और उपनिवेशियों के बीच समानांतर विचारधाराएं विद्यमान थीं। गैर-आवासी ब्रितानी तथा फ्रांसीसी पश्चिम अफ्रीका में कानूनी भेदभाव की भी समानांतर अनुपस्थिति थी हालांकि 1957 तक दोनों क्षेत्रों के विशिष्ट श्वेत क्लबों ने अफ्रीकियों पर सदस्यों या मेहमानों के तौर पर प्रतिबंध लगा दिया था। लोक सेवाओं की भूमिका के संदर्भ में

भी अंतर किया जाता था। ब्रिटेन में सरकारी नौकर निर्दलीय होते थे जबकि फ्रांस में कनिष्ठ नागरिक पदाधिकारी राजनीति से जुड़े थे। लेकिन स्वतंत्र होने के बाद इससे कोई खास फर्क नहीं पड़ा।

यदि हम प्रशासन की वास्तविक कार्यप्रणाली को नज़दीक से देखें, तो फ्रांसीसी प्रत्यक्ष शासन और ब्रितानी अप्रत्यक्ष शासन के बीच, जिसने पारंपरिक संस्थाओं को जीवित रखा, कोई स्पष्ट अंतर नहीं देखा जा सकता। फील्डहाउस ने बताया है कि 1929 के बाद विशेषकर 1932 के बाद प्रवृत्तियां और व्यवहार एक दूसरे के नजदीक आए।

12.9 सारांश

उपनिवेशवाद एक उतनी ही आधुनिक ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जितना की औद्योगिक पूंजीवाद। पूंजीवाद के तहत यदि मेट्रोपोलिस के देश विकास करते थे तो उपनिवेश अल्पविकास के दौर से गुजरते थे। उपनिवेशवाद विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व से कहीं अधिक है; यह एक विशिष्ट सामाजिक संरचना है, जिसमें नियंत्रण मेट्रोपोलिस के सत्तारूढ़ वर्ग के हाथ में होता है। संक्षेप में, उपनिवेशवाद वह प्रक्रिया है, जो उपनिवेशों में हुई और साम्राज्यवाद वह प्रक्रिया है जो मेट्रोपोलिस में हुई।

12.10 बोध प्रश्न

1) उपनिवेशवाद क्या है? यह साम्राज्यवाद से किस प्रकार भिन्न है?

2) उपनिवेशवाद को समझने के विभिन्न दृष्टिकोणों की व्याख्या कीजिए।

3) उपनिवेशवाद के विभिन्न ऐतिहासिक चरण क्या थे? उसने भारतीय अर्थव्यवस्था को कैसे प्रभावित किया?